धन उनका पुरोहित होगा। प्रतारण, पाशविक बल, प्रतिद्वन्दिता, ये ही उनकी पूजा-पद्धति होगी और मानव आत्मा उनकी बलिसामग्री हो जायगी। ऐसी दुर्घटना कभी हो नहीं सकती। क्रियाशक्ति की अपेक्षा सहन-शक्ति कई गुना अधिक बड़ी होती है। प्रेम का बल घृणा के बल की अपेक्षा अनन्त गुना अधिक है। यही कारण है कि जहाँ आधुनिक वैज्ञानिक खोजों के प्रभाव से पश्चिमी धर्मों के किले टूट-टूट कर धूल में मिल गये, जब कि आधुनिक विज्ञान के हथौड़े की चोटों ने उन मतों को चीनी के बर्तनों की तरह चूर-चूर कर दिया और पश्चिम के अधिकांश विचारशील लोगों ने 'चर्च' से अपना सम्बन्ध तोड़कर स्वतन्त्र मतों को अपना लिया, वहाँ वेद रूपी ज्ञान के झरने से जीवनामृत पीने वाले हिन्दू और बौद्ध-धर्म पुनरुज्जीवित होकर संसार को आध्यात्मिकता और मुक्ति का मार्ग दिखला रहे हैं, और संसार के सभी धर्म-प्रेमी इन्हीं की ओर चले आ रहे हैं।

हिन्दू जाति के पतन का एक कारण—सामाजिक असमानता

(श्री बी० आर० अम्बेडकर)

सामाजिक सुधार का मार्ग, कम से कम भारत में, मोक्षमार्ग के सदृश्य, अनेक कठिनाइयों से भरा पड़ा है। भारत में समाज-सुधार के मित्र थोड़े और समालोचक बहुत हैं। एक समय था जब कि सभी विचारशील यह स्वीकार करते थे कि सामाजिक उन्नति के बिना अन्य क्षेत्रों में भी स्थायी प्रगति सम्भव नहीं है। तब लोग यह मानते थे कि कुरीतियों के कारण जो हानि हुई है उसके फलस्वरूप हिन्दू-समाज में दक्षता की कमी हो गई है, इसलिये इन कुरीतियों के मूलोच्छेदन के लिये निरन्तर प्रयत्न होना चाहिये। इसी विचारधारा ने 'इण्डियन नेशनल कांग्रेस' के साथ-साथ 'सोशल-कान्फरेंस' को भी जन्म दिया था। कांग्रेस देश के राजनैतिक-संगठन की कमजोरियाँ दिखलाती थी और सोशल-कान्फरेंस हिन्दुओं के सामाजिक संगठन की त्रुटियों को मिटाने का यत्न करती थी। पर इन दोनों में शीघ्र ही मतभेद उत्पन्न हो गया और राजनैतिक नेता कहने लगे कि राजनैतिक सुधारों के लिये सामाजिक-सुधारों का होना अनिवार्य नहीं है। इस विवाद में कांग्रेस की जीत हुई और कुछ वर्षों में सोशल-कान्फरेंस का अस्तित्व मिट गया। उस अवसर पर कांग्रेस के एक प्रेसीडेण्ट श्री० डब्लू० सी० बनर्जी ने कहा था—

"मैं उन लोगों के साथ सहमत नहीं हूँ जो कहते हैं कि जब तक हम अपनी सामाजिक पद्धति का सुधार नहीं करते, तब तक हम राजनीतिक सुधार के योग्य नहीं हो सकते। मुझे इन दोनों के बीच कोई सम्बन्ध नहीं दीखता।"

उस समय ऐसे अनेक लोग थे और अब भी हैं जो इस विषय में राजनीतिज्ञों की जीत देख कर प्रसन्न थे। पर जो लोग सामाजिक-सुधार के महत्त्व में विश्वास रखते हैं, वे पूछा करते हैं, कि क्या मि० बनर्जी की बात का कोई उत्तर नहीं दिया जा सकता? इसके लिये हम अछूतों के प्रति सवर्ण हिन्दुओं के व्यवहार के कुछ उदाहरण देना चाहते हैं जिससे इस विषय को समझने में सहायता मिलेगी।

(१) अब से दो-सौ वर्ष पहले पेशवाओं के शासनकाल में, महाराष्ट्र देश में, यदि कोई सवर्ण हिन्दू सड़क पर चल रहा हो तो अछूत को वहाँ चलने की आज्ञा नहीं होती थी, ताकि कहीं उसकी छाया से वह हिन्दू भ्रष्ट न हो जाय। अछूत को अपनी कलाई पर या गले में निशानी के तौर पर एक काला डोरा बाँधना पड़ता था, ताकि हिन्दू उसे भूल से

स्पर्श न कर बैठें। पेशवाओं की राजधानी पूना में अछूतों के लिये राजाज्ञा थी कि वे कमर में झाड़ू बाँध कर चलें। चलने से भूमि पर उनके पैरों के जो चिह्न बनें उनको उस झाड़ू से मिटाते जायें, ताकि कोई सवर्ण उन पदचिह्नों पर पैर रखने से अपवित्र न हो जाय। पूना में अछूत को गले में मिट्टी की हाँडी लटकाकर चलना पड़ता था, ताकि उसे थूकना हो तो उसमें थूके, क्योंकि भूमि पर उसके थूकने से यदि उस के थूक पर किसी सवर्ण का पैर पड़ गया, तो वह अपवित्र हो जायगा!

मध्यभारत में बलाई नाम की एक अछूत जाति रहती है। सन् १९२८ में इन्दौर के १५ गावों के सवर्ण हिन्दुओं ने, जिनमें वहाँ के पटेल और पटवारी भी थे, बलाइयों को सूचना दी कि यदि तुम हमारे यहाँ रहना चाहते हो तो तुमको हमारी आज्ञायें माननी होंगी। इन आज्ञाओं में बलाइयों द्वारा सब तरह की निकृष्ट सेवाएँ करने और बदले में हिन्दुओं की मर्जी के मुताबिक नाम मात्र की मजदूरी लेने की बातें थी। जब बलाइयों ने इन्हें न माना तो उनको गांव के कुओं से पानी भरने और पशु चराने से रोक दिया गया। बलाइयों को हिन्दुओं की भूमि में से जाने से रोक दिया गया। इसलिये बलाइयों के जिन खेतों के इर्दगिर्द हिन्दुओं के खेत थे उनमें जा सकना असम्भव हो गया। हिन्दुओं ने अपने पशु बलाइयों के खेतों में छोड़ दिये। बलाइयों ने इन अत्याचारों के विरुद्ध इन्दौर-दरबार में आवेदन-पत्र दिये। पर उनको समय पर सहायता न मिल सकी और विवश होकर उन्हें अपने बापदादों की भूमि को छोड़कर आस-पास के अन्य इलाकों में भाग जाना पड़ा।

गुजरात के अन्तर्गत कविथा-ग्राम में भी ऐसी ही घटना हुई थी। वहाँ के हिन्दुओं ने अछूतों को आज्ञा दी कि तुम गाँव के सरकारी स्कूल में अपने बच्चों को भेजने का आग्रह मत करो। सवर्ण हिन्दुओं की इच्छा के विरुद्ध अपने नागरिक अधिकारों पर जोर देने का साहस करने पर बिचारे अछूतों को घोर कष्ट सहन

कुछ खाते-पीते अछूत परिवारों की स्त्रियों ने धातु के बासनों में पानी लाना शुरू किया। अछूतों द्वारा धातु के बासनों के उपयोग को सवर्ण हिन्दुओं ने अपना अपमान समझा और अछूत स्त्रियों की ढिठाई के लिये उन पर हल्ला बोल दिया।

जयपुर राज्य के चकवारा गांव की घटना सबसे विचित्र है। वहां के कुछ अछूतों ने तीर्थ यात्रा से लौटकर गांव के अछूत भाइयों को भोज देने का प्रबन्ध किया। उन्होंने घी के पकवान बनाये। परन्तु जिस समय अछूत लोग भोजन कर ही रहे थे कि हिन्दू लोग लाठियाँ लिये सैकड़ों की संख्या में आ धमके। उन्होंने उनके भोजन को खराब कर दिया और खाने वालों को पीटा। वे बिचारे जान बचाकर भाग गये। इन निहत्थे अछूतों पर यह घातक आक्रमण क्यों किया गया? इसका उत्तर यह दिया गया कि क्योंकि अछूत लोगों ने घी के पकवान बनाने की ढिठाई की थी। इसमें सन्देह नहीं कि घी केवल धनी लोग ही खा सकते हैं, परन्तु आज तक यह कोई नहीं समझता था कि घी खाना भी कोई बड़ी जाति होने का निशान है। चकवारा के सवर्ण हिन्दुओं ने यह प्रकट कर दिया, कि अछूतों को घी खाने का कोई अधिकार नहीं, चाहे वे खरीद भी सकते हों, क्योंकि इससे हिन्दुओं की गुस्ताखी होती है।

इन घटनाओं से स्पष्ट है कि राजनैतिक सुधारों के साथ-साथ सामाजिक-सुधार होना भी आवश्यकीय है। इतिहास भी इस बात का समर्थन करता है कि राजनीतिक क्रांतियों से पहले सदा ही सामाजिक और धार्मिक क्रांतियाँ होती रही हैं। लूथर द्वारा जारी किया हुआ धार्मिक-संस्कार योरोपीय लोगों के राजनीतिक उद्धार का पूर्व-लक्षण था। इंगलैण्ड में भी प्यूरीटिनिज्म राजनीतिक स्वतन्त्रता की स्थापना का कारण हुआ। प्यूरीटिनिज्म ने नये संसार की नींव रखी और उसी ने अमेरिकन स्वतन्त्रता का युद्ध जीता। यह प्यूरीटिनिज्म एक धार्मिक आन्दोलन ही था। यही बात मुसलिम साम्राज्य के विषय में भी

के पहले, हजरत मुहम्मद उनमें एक पूर्ण धार्मिक क्रांति उत्पन्न कर चुके थे। भारतीय इतिहास भी इस सिद्धान्त का समर्थन करता है। चन्द्रगुप्त की चलाई हुई राजनीतिक क्रांति से बहुत पहिले भगवान बुद्ध धार्मिक और सामाजिक क्रांति कर चुके थे। महाराष्ट्र के साधु-महात्माओं द्वारा सामाजिक और धार्मिक सुधार के बाद ही शिवाजी राजनीतिक क्रांति ला सके थे। सिक्खों की राजनीतिक क्रांति के, पूर्व गुरु नानक सामाजिक और धार्मिक क्रांति पैदा कर चुके थे। ये उदाहरण यह दिखलाने के लिये पर्याप्त हैं कि किसी जाति के राजनैतिक अभ्युदय के लिये पहले उसकी आत्मा और बुद्धि का उद्धार होना परम-आवश्यक है।

[इतिहास के वास्तविक तत्व को जानने वाला विद्यार्थी भली प्रकार समझता है कि भारत की राजनीतिक पराधीनता का प्रधान कारण भारतीय समाज में उत्पन्न हो गया यह सामाजिक अन्याय ही था। इस समय भी हमने अपने राजनैतिक-संग्राम में जो सफलता प्राप्त की है उसका बहुत कुछ श्रेय पिछले साठ-सत्तर वर्षों के समाज और धर्म क्षेत्र सम्बन्धी सुधार आन्दोलन को भी है। पर यह आन्दोलन अभी पूर्ण सफल नहीं हुआ है और हिन्दू-जाति के एक बड़े भाग पर उसका प्रभाव बहुत थोड़ा पड़ा है। यही कारण है कि राजनीतिक स्वतन्त्रता पा जाने पर भी भारतीय राष्ट्र सबल नहीं हो रहा है और उसकी प्रगति में अनेकों बाधायें आती रहती हैं। इस लिये यदि हम अपना कल्याण चाहते हैं तो धर्म के सत्य सिद्धान्तों का प्रचार करके सामाजिक अन्याय का मूलोच्छेदन करना चाहिये।]

दिखावटी और वास्तविक नैतिकता

(श्री लालजी राम शुक्ल)

मनुष्य का स्वभाव दो तत्वों का बना हुआ है— एक पाशविक और दूसरा दैविक। पाशविक स्वभाव के कारण वह वैसा ही आचरण करता है जिस प्रकार संसार के दूसरे प्राणी आचरण करते हैं। जिस प्रकार संसार के अन्य प्राणियों में अनेक प्रकार की शरीर पोषण और सुख की इच्छायें हैं, उसी प्रकार मनुष्य में भी ये इच्छायें हैं। शरीर के रक्षा, और उसके सुख की वृद्धि करने वाली जन्म जात प्रवृत्तियों को मूल प्रवृत्तियाँ कहा जाता है। ये प्रवृत्तियाँ प्रकृति की प्राणी मात्र को देन हैं। इनकी उत्पत्ति जीवन के परंपरागत अभ्यास से होती है। मूल प्रवृत्ति प्राणी मात्र की रक्षा करती और उनकी वृद्धि करती हैं। इन मूल प्रवृत्तियों का मुख्य ध्येय वैयक्तिक जीवन की वृद्धि है।

नैतिकता का हेतु मनुष्य को अपने व्यापक स्वभाव का ज्ञान करना है। नैतिकता अपने आपको वैयक्तिक जीवन से ऊपर उठाने का साधन है। नैतिकता का आधार प्राकृतिक प्रवृत्तियाँ बताई जाती हैं। प्रवृत्तिवादी मानव-आचरण को दूसरे प्राणियों के आचरण से भिन्न नहीं मानते। जिस प्रकार दूसरे प्राणियों के आचरण का मूल स्रोत उन प्राणियों को सुख की चाह और दुःख से बचाव है उसी प्रकार मनुष्य के आचरण का भी मूल प्रेरक सुख की चाह और दुःख से बचाव होता है। पर इस प्रकार मनुष्य के आचरण को समझना मनुष्य स्वभाव की विशेषता को दृष्टि से ओझल करना है। मनुष्य विवेक युक्त प्राणी है मनुष्य का विवेक उसके व्यक्तित्व का प्रसार करता है। विवेक के कारण मनुष्य दूसरे व्यक्तियों के सुख में अपना सुख देखने लगता है और वह अपने आपकी पूर्णता का तब तक अनुभव नहीं करता जब तक दूसरे लोगों का उससे लाभ न हो।

पशुओं में अपने आवेश को रोकने की शक्ति नहीं रहती; उसे जिस ओर प्रकृति ले जाती है अर्थात्